बच्चों की शख़्सियत साज़ी

स्कूल बच्चों को सिर्फ़ तालीम ही नहीं देता बल्कि उनका किरदार भी बनाता है और उनकी शख़्सियत साज़ी यानी व्यक्ति निर्माण करता है। शख़्सियत साज़ी में यह बात शामिल है कि बच्चे के अख़्लाक़ सवारे जाएँ, उसकी सोई हुई सलाहियतों को निखारा जाए। उसको अच्छा नागरिक बनाया जाए। एक बच्चा जब पैदा होता है तो हज़ारों स्किल्स (महारतें) लेकर पैदा होता है, मगर ये स्किल्स घर, माहौल और स्कूल के ज़रिए बढ़ती हैं। बच्चों की सलाहियतों और महारतों को पहचानना और उनको परवान चढ़ाना यह इदारे की ज़िम्मेदारी है। इन महारतों में दो चीज़ें बहुत अहम हैं :

बोलने की महारत

बोलने की नेमत बड़ी नेमत है। ज़रा सोचिए आप गुंगे होते तो क्या होता, आप अपना दर्द भी किसी को न बता सकते। अल्लाह का एहसान है कि उसने गूंगे समाज में बहुत कम पैदा किए हैं। बोलने की इस सलाहियत को बढ़ाने की ज़रूरत है। मिसाल के तौर पर बच्चों को बात-चीत के अदब सिखाए जाएँ, गुफ़्तगू का सलीक़ा बताया जाए, तलफ़्फ़ुज और कहने के ढंग पर ख़ास तवज्जोह दी जाए, अल्फ़ाज़, वाक्य और मुहावरों का सही समय इस्तेमाल सिखाया जाए। बच्चे की शख़्सियत में यह बहुत अहम है कि वह क्या बोल रहा है? उसके लिए बहुत सी सक़ाफ़ती सरगर्मियाँ अंजाम दी जाएँ। बच्चे के अन्दर तक़रीर और नज़्म की सलाहियत होती है उसको बढ़ाया, निखारा और संवारा जाए।

तरसील के ज़राए (संचार के साधन)

बोलने की महारत के साथ-साथ यह भी सिखाया जाए कि यह बात आपको सामने वाले तक किस तरह पहुँचाना है या तरसील के ज़राए क्या-क्या हो सकते हैं। एक बच्चा बात-चीत का रास्ता एख़्तियार करता है, एक बच्चा तक़रीर का, एक बच्चा शायरी में अपनी बात कहता है। इसी तरह एक बच्चा माइक से बोलता है, एक सोशल मीडिया का इस्तेमाल करता है। एक प्रिन्ट मीडिया में अपनी बात कहता है, एक इलेक्ट्रोनिक मीडिया के ज़रिए अपने पैग़ाम को आम करता है। इदारे की ज़िम्मेदारी है कि बच्चों को क्या बोलना और केसे बोलना है, यह भी सिखाया जाए।

अपनी बात दूसरों तक पहुँचाना, अपने दिल की बातों का इज़हार व अदायगी आज के दौर में बहुत अहम है। वही लोग कामयाब हैं जो नए तक़ाज़ों के तहत बात करने का सलीक़ा रखते हैं और बात पहुँचाने के लिए नए ज़राए इस्तेमाल करना जानते हैं।

बॉडी लेंगुएज (शारीर की भाषा)

बच्चे की शख़्सियत में उसका लिबास, उसके बालों की तराश ख़राश, उसके बैठने उठने के तरीक़ों का भी अहम रोल है। बोलने की महारत और तरसील के ज़राए के साथ-साथ यह भी ज़रूरी है कि बोलते वक़्त और अपनी बात दूसरों तक पहुँचाते वक़्त आपके खड़े होने का अन्दाज़ केसा है। हाथ के इशारे और संकेत भी अपनी ज़बान में बहुत कुछ कह देते हैं। ज़रूरी है कि शख़्सियत की तामीर (रचना) करते वक़्त इन महारतों का ख़ास ख़्याल रखा जाए।

●●●

बालिग़ों की तालीम (प्रौढ़ शिक्षा)

मिल्लत के तालीमी मसाइल के साथ-साथ एक मसला बालिग़ों की तालीम का भी है। राज्य सरकार ने भी इस ताल्लुक़ से बहुत सी स्कीमें बनाईं। वे सब तो फ़ाइलों और अधिकारियों की नज़र हो गईं। बालिग़ों की तालीम पर ज़रूर सोचना चाहिए। मुसलमानों में बड़ी उम्र के बहुत से लोग कम तालीम याफ़ता हैं और औरतें तो और भी बहुत कम हैं। ऐसे में मुख़्तलिफ़ सरकारी विभागों में फ़ार्म वग़ैरह भरते वक़्त परेशानी होती है। अनपढ़ होने के कारण डॉक्यूमेन्ट्स में ग़लतियाँ हो जाती हैं। कहीं ख़ुद का नाम ग़लत, कहीं बाप का नाम ग़लत, दोनों सही तो पता ग़लत। बैंक, डाकख़ाना वग़ैरह में अक्सर ऐसे लोग रोज़ाना परेशान होते नज़र आते हैं। देश जिस रास्ते पर चल रहा है और आसाम में नागरिकता के जो मसाइल सामने हैं, यह सब ज़्यादा तर जिहालत की वजह से हैं।

बड़ों की जिहालत भी दूर की जा सकती है। मर्कज़ी हुकूमत की तरफ़ से भी बहुत से कोर्सेज़ हैं, उनको छोड़ें अगर आप पढ़ना चाहते हैं तो अपनी मस्जिद के इमाम साहब से ताल्लुक़ क़ायम कीजिए। पहले उनसे क़ुरआन मजीद और उर्दू की तालीम हासिल कीजिए। आपके मौहल्ले या घर में अगर कोई शख़्स हिन्दी से वाक़िफ़ है तो उससे हिन्दी पढ़ लीजिए अगर आप छः महीने पाबन्दी से दो घण्टे रोज़ पढ़ लें और संजीदगी से मेहनत कर लें तो आप अच्छा ख़ासा इल्म हासिल कर लेंगे। आपके पास वक़्त की कमी नहीं है। आप दो घण्टे आसानी से निकाल सकते हैं। ट्यूटर को महीना में कुछ फ़ीस दें तो वह भी ख़ुश हो जाएगा।

हमारे शिक्षा प्राप्त लोगों को चाहिए कि वे अपने मौहल्ले के दस ऐसे बड़ी उम्र के लोगों को पढ़ाऐं, जो पढ़ना नहीं जानते हैं। मिल्लत के तालीमी मसाइल पर हमारे समझ बूझ रखने वाले गुफ़्तगू बहुत करते हैं। क्या हम ऐसा नहीं कर सकते कि हर पढ़ा लिखा आदमी अपनी ज़िन्दगी में सिर्फ़ दस आदमियों को पढ़ा दे।

बालिग़ों की तालीम के ताल्लुक़ से दीनदार हज़रात की ज़िम्मेदारी भी बनती है। उन्हें चाहिए कि किसी तालीम याफ़ता आदमी की दो घण्टे की ख़िदमात हासिल करें। यह ख़िदमत कुछ रुपये महीने पर हासिल हो सकती हैं और फिर उस गली मौहल्ले के अनपढ़ लोगों की तालीम का नज़्म किया जाए। एक साल का मन्सूबा बनाकर अगर काम किया जाए तो सिर्फ़ कुछ हज़ार रुपये में एक मौहल्ले के लोगों को पढ़ाया जा सकता है।

बालिग़ों की तालीम में बड़ी उम्र की लड़कियां और औरतें भी शामिल हैं। हमारी बहनें जो अब स्कूल नहीं जा सकतीं, वे अगर थोड़ा वक़्त निकाल कर मौहल्ले की किसी पढ़ी लिखी औरत से ट्यूशन के तौर पर इल्म हासिल कर लें तो उनकी आने वाली नस्लों को बड़ा फ़ायदा होगा। बड़े फ़ायदे के लिए ईसार और त्याग की ज़रूरत है। वक़्त और माल की क़ुर्बानी देनी होगी।

एक मौहल्ले या एक बस्ती के शिक्षा प्राप्त लोग अगर यह तय कर लें कि वे अपनी बस्ती के हर शख़्स को शिक्षित बनाएंगे तो मेरा यक़ीन है कि दो साल में वे यह टारगेट हासिल कर सकते हैं।

●●●

महिलाओं की शिक्षा

आज देश के हालात पर नज़र डालिए और तलाक़, हलाला वग़ैरह के नाम पर जो शोर है, उसे सुनिए, हमारी औरतें दूसरों का आल ए कार (हथियार) बनी हुई हैं। उसकी वजह यह है कि हमने उन्हें सही तालीम व तर्बियत नहीं दी जाती। अगर उन्हें तालीम दिलाई होती और उनके अंदर क़ाएदाना जोहर निखारे होते, उन्हें अपनी बात कहने का मौक़ा दिया होता तो शायद यह दिन न देखने पड़ते कि कुछ ही सही लेकिन ख़ुद मुस्लिम औरतें इस्लामी शरीअत के ख़िलाफ़ मैदान में हैं। ताज्जुब होता है कि औरतों के मामलात पर भी हमारे समाज में मर्द अपने विचार प्रकट करते हैं। आज ज़रूरत इस बात की है कि औरत न सिर्फ़ यह कि शिक्षित हो बल्कि वह अपनी बात कहने का अच्छी तरह सलीक़ा भी रखती हों।

मुस्लिम समाज में तालीम के मामले में लड़की और लड़के में भेद-भाव महसूस किया जाता है। इसकी बहुत सी सामाजी कारण हो सकती हैं, एक तस्वीर यह भी है कि ''लड़की पराया धन है'' इसे पढ़ाकर क्या करेंगे, इसे दूसरे के घर जाना है, लड़का हमारे साथ रहेगा, इसकी तालीम हमारे काम आएगी। मुसलमान अपनी बेटी को पढ़ाने पर तवज्जोह नहीं देते, लेकिन बहू फिर भी पढ़ी लिखी तलाश करते हैं। यह अजीब बात है जब आप लड़की को नहीं पढ़ाएंगे तो दुल्हन पढ़ी लिखी कहाँ से लाएंगे, लड़के और लड़कियों में तालीम दिलाने में फ़र्क़ और यह सोच सरासर ग़ैर-इस्लामी है। अल्लाह और उसके रसूल[स0] ने लिंग की बुनियाद पर रवैयों में फ़र्क़ करना पसन्द नहीं फ़रमाया है। आप[स0] ने साफ़-साफ़ फ़रमाया कि ''इल्म का हासिल करना मर्द व औरत दोनों पर फ़र्ज़ है'' और सहाबा[रज़ि0] में भी इसकी मिसालें मिलती हैं। नबी

अकरम[स0] जिस तरह सहाबा[रज़ि0] को तालीम देते, आप सहाबियात की मजलिस भी क़ायम करते और उन्हें भी तालीम देते, क़ुरआन मजीद जिस तरह सहाबा[रज़ि0] सुनते और ज़ुबानी याद करते, उसी तरह सहाबियात भी सुनती और ज़ुबानी याद करतीं, इस्लाम ने औरतों पर जो एहसानात किए हैं, उसमें उन्हें तालीम का हक़ देकर बड़ा एहसान किया है। हज़रत आइशा सिद्दीक़ा[रज़ि0] कवि भी थीं और विद्वान भी, कुछ अवसरों पर सहाबा ए किराम[रज़ि0] उनसे मसाइल पूछते और दीन का इल्म हासिल करने आते।

मर्द व औरत की तालीम में इस पर तो ग़ौर किया जा सकता है कि किस तरह के उलूम मर्दों को हासिल करने और किस तरह के औरतों को हासिल करने ज़रूरी हैं। यूँ तो तमाम उलूम के दरवाज़े सब पर खुले रखना चाहिए, फिर भी बुनियादी तालीम यानी इण्टर (10+2) के बाद औरतों को उनके ख़ास मैदान में आगे बढ़ना चाहिए। मिसाल के तौर पर पढ़ान, तिब (इलाज आदि), कंप्यूटर, फैशन डिज़ाइनिंग, बैंकिंग, कुकिंग वग़ैरह के कार्य क्षेत्र ऐसे हैं, जिनमें औरतों की ज़रूरत भी है।

दूसरी बात यह है कि मुसलमान सुरक्षा के कारण भी लड़कियों को तालीम से रोकते हैं, जब तक उनके गाँव, मौहल्ले या शहर में तालीम की आसानी होती है, वे पढ़ाते हैं वर्ना तालीम का सिलसिला रोक देते हैं। बच्चियों की इज़्ज़त व इस्मत की हिफ़ाज़त ज़ाहिर है तालीम से अहम है और देश के अख़्लाक़ी हालात सही मायने में इसकी इजाज़त नहीं देते कि हमारी बच्चियाँ तालीम के लिए असुरक्षित सफ़र करें। परन्तु इसका हल तलाश करना चाहिए। एक हल यह है कि हम आगे की तालीम प्राइवेट दिलाएँ, जिसमें सिर्फ़ परीक्षा के कुछ दिनों में ही घर से बाहर जाना होता है। दूसरा हल यह है कि कई लड़कियाँ एक साथ मिलकर किसी एक स्कूल में दाख़िला लें। एक साथ आएँ जाएँ इससे ताक़त हासिल रहेगी। कभी-कभी इनके सरपरस्तों में से भी कोई

साथ जा सकता है। आने जाने के लिए कोई गाड़ी भी फ़राहम की जा सकती है। एक हल यह हो सकता है कि अपने किसी रिश्तेदार के यहाँ रखकर तालीम दिलाई जाए, जहाँ का माहौल बेहतर हो और लोग भारोसे के लायक़ हों। यह भी बेहतर है कि माँ-बाप अपनी बच्चियों की ख़ातिर अपना आवास बदल लें। यह किसी तरह मुनासिब नहीं कि बच्चियों को तालीम से रोका जाए, हमारी बच्चियाँ जब तक माँ-बाप के साथ हों उन्हें तालीम हासिल करना चाहिए, सुसराल जाकर भी तालीम का सिलसिला जारी रखा जा सकता है।

लड़कियों की तालीम से ख़ानदान का फ़ायदा होता है। माँ जब पढ़ी लिखी होगी तो अपने बच्चों की तालीम की फ़िक्र भी करेगी और निगरानी भी। मुस्लिम मिल्लत की जिहालत की एक बड़ी वजह यह भी है कि हमारी माएँ अनपढ़ और जाहिल हैं।

क़ौम के ज़िम्मेदार लोगों को इस ओर ध्यान देना चाहिए, गाँव और मौहल्ले में दो घण्टे का तालीमी मर्कज़ चलाकर भी हम अपनी बच्चियों को तालीम दे सकते हैं। बच्चियाँ लड़कों के मुक़ाबले ज़्यादा मेहनत करती हैं। वे संजीदा भी होती हैं, उन्हें फ़ेल होने में बेइज़्ज़ती भी महसूस होती है। वे कम वक़्त में ज़्यादा इल्म हासिल कर सकती हैं।

क़ौम में इंक़लाब और तब्दीली के लिए लड़कियों की तालीम बहुत ज़रूरी है, हज़ार कठिनाइयों को बरदाश्त कीजिए, हज़ार मुश्किलात का सामना कीजिए और अपनी कमाई का एक हिस्सा इन पर ख़र्च कीजिए। दहेज में चार बर्तन कम दीजिए, एक वक़्त फ़ाक़ा कीजिए, सप्ताह में एक दिन घर के सारे लोगों से रोज़ा रखवाइए लेकिन अपनी बच्चियों को ज़रूर पढ़ाइए। आज आपकी बच्ची है कल किसी बच्चे की माँ बनने वाली है। उसकी गोद में क़ौम और देश का भविष्य परवरिश पाएगा उसकी फ़िक्र कीजिए।

●●●

ग़रीब छात्रों की शिक्षा

आर्थिक तौर पर समाज में असमानता हैं और यह फ़ित्री हैं। अल्लाह तआला का निज़ाम है, उसने किसी को बेहिसाब रिज़्क़ दिया किसी को गिन-गिन कर दिया। इस आर्थिक असमानता को सही करना मुम्किन नहीं है। यह हमेशा से है और हमेशा रहेगी। परन्तु जो चीज़ मतलूब है वह यह है कि मालदारों के माल में ग़रीबों और महरूमों का हक़ है। यह बात क़ुरआन कहता है। इसका मतलब है कि अगर कोई शख़्स किसी की माली मदद करता है तो वह एहसान नहीं करता, बल्कि उसका हक़ अदा कर रहा है। इस हक़ का अदा करना ज़रूरी है। अगर कोई हक़ अदा न करे तो इसे छीना भी जा सकता है। इस्लामी हुकूमत में अगर कोई शख़्स ज़कात देने से इन्कार करे तो उससे ज़बरदस्ती वसूल की जाएगी, क्योंकि वो हक़ अदा नहीं कर रहा है। इन सब गुफ़्तुगू का हासिल (सारांश) यह है कि समाज के ग़रीब और ज़रूरतमंद छात्र की तालीम का बोझ मालदार उठाएं और ऐसा नहीं है कि यह काम नहीं हो रहा है। मालदार एक बड़ी रक़म ग़रीब बच्चों की तालीम पर ख़र्च कर रहे हैं, लेकिन जिस तरह हमारे दूसरे काम बदनज़्मी का शिकार हैं, इसी तरह यह काम भी बदनज़्मी का शिकार होकर फ़ायदेमंद साबित नहीं हो रहे हैं।

हमारे अरबी और इस्लामी मदारिस जिनकी संख्या काफ़ी है, क़ौम के सरमाए से चल रहे हैं। हर मदरसा जिसमें 100 बच्चे हैं वहाँ बहुत से अध्यापक भी हैं, चार पाँच बच्चे मदरसे के हॉस्टल में भी रहते हैं। इसका वार्षिक ख़र्च 5 या 6 लाख से कम क्या होगा। यह रक़म क़ौम से ही आ रही है। गाँव में अगर चार बिरादरियाँ हैं तो चार ही मदरसे हैं। फिर मसलक के नाम पर अलग मदरसे। अगर आप जायज़ा

लेंगे तो पाएंगे कि एक गाँव में दस से पन्द्रह लाख रुपये ग़रीबों की तालीम पर ख़र्च होते हैं। शहर में यह रक़म 30 लाख से 50 लाख तक है। लेकिन नतीजा क्या है? पूरे गाँव में दस साल में दो चार हाफ़िज या एक दो आलिम। ग़ौर करना चाहिए की इतनी बड़ी रक़म ख़र्च करने के बाद भी क़ौम जिहालत के ग़ार में जा रही है।

अगर यही रक़म एक जगह जमा हो और गाँव में एक स्कूल हो, वहाँ स्वयं अपना भार उठाने वाले छात्र अपना ख़र्च ख़ुद उठाएँ और ग़रीब व ज़रूरतमंद छात्र की फ़ीस ज़कात फण्ड से अदा कर दी जाए। फिर यही बच्चे जब आगे तालीम हासिल करें तो इनकी मदद की जाए। इनकी मदद इन के वार्षिक रिपोर्ट कार्ड पर निर्भर हो, फेल होने वालों की मदद रोक दी जाए। आगे बड़ने वाले और जहीन बच्चों को कोचिंग कराके प्रोफ़ेशनल कोर्सेज़ में दाख़िला कराया जाए। जो बच्चे आलिम बनने के ख़्वाहिशमन्द हों उन्हें बड़े अरबी मदारिस में तालीम दिलाई जाए तो आप देखेंगे कि कम ख़र्च में ज़्यादा बच्चे लाभ उठा सकेंगे।

दूसरी शक्ल यह है कि हर मालदार शख़्स एक ग़रीब बच्चे को **(ADOPT)** करे, यानी गोद ले लें। यह गोद लेना सिर्फ़ तालीम की हद तक होगा। यानी इस बच्चे के तालीमी ख़र्च वह अदा करेगा, बच्चे का तालीमी रिकॉर्ड उसे दिया जाएगा। यह मालदार शख़्स ग़रीब छात्र को बिल्कुल उसी तरह पढ़ाएगा, जिस तरह अपनी औलाद को पढ़ाता है। अल्लाह तआला ने समाज में ग़रीब और मालदार दोनों पैदा किए हैं और एक बड़ी संख्या बीच के दर्जे के लोगों की है। एक बस्ती के रहने वाले अपनी बस्ती के ग़रीब बच्चों की तालीमी देख भाल आसानी से कर सकते हैं।

●●●

ड्रापआउट्स की तालीम

बच्चों की एक बड़ी संख्या बीच में ही तालीम छोड़ देती है। 40% बच्चे प्राइमरी में और 50% बच्चे जूनियर के बाद घर बैठ जाते हैं। ग्रेजुएशन में 4% और पी. जी. कोर्सेज़ तक सिर्फ़ 2% छात्र ही पहुँच पाते हैं। प्रोफेशनल कोर्सेज़ में दाख़िला लेने वालों की संख्या बताने लायक़ ही नहीं है। ड्रापआउटस यानी थोड़ी तालीम के बाद तालीम छोड़ देना मिल्लत का एक बड़ा मसला है।

ड्रापआउटस की एक वजह ध्यान न देना है। माँ-बाप बच्चों की तालीम पर पूरे तौर पर तवज्जोह नहीं देते। बच्चों की प्रोग्रेस रिपार्ट तक नहीं देखते। बच्चों को पेश आने वाले मसाइल पर कान नहीं धरते, उनके हल की संजीदा कोशिश नहीं करते और यह सब माँ-बाप की तालीम से दिलचस्पी न लेने का नतीजा है। तालीम के वे कन्फ़ियूज़न जिनका ज़िक्र इस किताब में किया गया है। वे रुकावटे हैं जिनकी निशान दही की जा चुकी है। इन रुकावटों का हल भी बताया गया है।

ड्रापआउट्स के ताल्लुक़ से ज़िम्मेदार लोगों या इदारों और संस्थाओं को एक काम तो यह करना चाहिए कि वे ऐसे छात्र से राबता करें। कारण मालूम करें और इसके हल का उपाय इख़्तियार करें। एक बस्ती और मौहल्ले में ड्रापआउट्स की तादाद महदूद ही होती है। कुछ कारण भी बहुत मामूली होती है। कभी-कभी तो सिर्फ़ मदरसा और स्कूल के नज़्म से नाराज़ होकर या किसी साथी से झगड़ा होने पर ही बच्चा तालीम छोड़ देता है। ये मामूली वजूहात सिर्फ़ आपकी तवज्जोह से दूर हो सकती है।

एक मसला यह है कि हमारे मर्दों की एक बड़ी संख्या रोज़गार के सिलसिले में अपने घर से दूर ही रहती है। इनके बच्चों को बाप की

सरपरस्ती हासिल नहीं होती। एक उम्र के बाद बच्चा अपनी माँ के कन्ट्रोल से बाहर हो जाता है और उसे बाप की सख्ती की ज़रूरत होती है। ऐसे बच्चे भी रहनुमाई न होने और देखभाल न होने की वजह से तालीम छोड़ देते हैं। बहरहाल वजह कोई भी हो हमें इस ओर गम्भीरता से मिल जुलकर तवज्जोह देना चाहिए। क़ौम का एक बच्चा भी जाहिल रहेगा तो जिहालत फैलाएगा। और उसका नुक़सान सभी को होगा। जिस तरह कोई छूत की बीमारी का मरीज़ पूरे मौहल्ले को बीमार करने के लिए काफ़ी है, उसी तरह एक जाहिल पूरे मौहल्ले के लिए नुक़सानदेह है।

●●●

तालीम में मस्जिदों की भूमिका

मस्जिद मिल्लते इस्लामिया के लिए एक बहुत बड़ी नेमत है। अल्लाह का शुक्र है कि जहाँ-जहाँ मुस्लिम आबादी है, वहाँ मस्जिदें हैं, सिवाए उन जगहों को छोड़कर जहाँ मुसलमान बहुत कम और कमज़ोर हैं या वे जगहें देशवासियों के लिए तक़द्दुस (पवित्रता) का दर्जा रखते हैं।

मस्जिद का इस्तेमाल बहुत महदूद है। पाँच नमाज़ों में मुश्किल से दो घण्टे का वक़्त लगता है। बहुत सी मस्जिदें सिर्फ़ नमाज़ के लिए ख़ास होकर रह गईं हैं, पहले मस्जिद में मकतब भी होता था, अब भी कुछ मस्जिदों में मकतब का निज़ाम है, लेकिन बहुत सी मस्जिदों के साथ मकतब और मदरसा अलग से क़ायम किया गया है। वे मस्जिदें जहाँ मकतब हैं वे फिर भी किसी क़द्र बेहतर हैं कि वहाँ दो चार घण्टे नाज़रा क़ुरआन और दीनी तालीम के मसाइल की तालीम हो जाती है।

मस्जिद के इस्तेमाल पर ग़ौर करना चाहिए। नबी अकरम[स0] की मस्जिद जिसे हम मस्जिदे नबवी के नाम से जानते हैं। दौरे नबूवत और दौरे ख़िलाफ़त में नमाज़ के लिए इबादत की जगह, तालीम के लिए स्कूल, फ़ैसलों के लिए अदालत, मशवरों के लिए कम्युनिटी सेन्टर का दर्जा रखती थी। बदर की जंग के काफ़िर क़ैदियों को मस्जिदे नबवी में ही रखा गया था। हज़रत उमर[रज़ि0] ने मस्जिदे नबवी में बैठकर ख़िलाफ़त के काम अंजाम दिए थे। आज मस्जिद में मिल्ली मसाइल की बात या देश के हालात पर कोई गुफ़्तगू करता है तो उसे रोका और टोका जाता है कि ये दुनियादारी की बातें हैं। दीन और इबादत के ग़लत तसव्वुर ने मस्जिद के किरदार को भी बहुत सीमित कर दिया है। लाखों और करोड़ों रुपये लगाकर लम्बी चौड़ी मस्जिद बनाई जाती है। मस्जिद के

नाम पर माली मदद आसानी के साथ मिल जाता है। महंगाई के इस दौर में क्यों न हम मसाजिद में ही स्कूल चलाएँ। मुम्बई, चेन्नई और बैंगलोर की कुछ मसाजिद में बाक़ायदा हुकूमत से मन्ज़ूर शुदा इदारे चल रहें हैं। वानमबाड़ी (तामिलनाडु) में शादी हाल नहीं है वहां सारी शादियां मस्जिद में हो जाती हैं और फ़ैसले भी मस्जिद में होते हैं।

मस्जिद को आज भी हमें कम से कम 12 से 15 घण्टे इस्तेमाल करने का मन्सूबा बनाना चाहिए। फ़जर की नमाज़ के बाद, दर्से क़ुरआन व हदीस की मजलिस हो, जिसमें क़ुरआन व हदीस की तालीम हो, स्कूल वक्त से पहले उन छात्र व छात्रा के लिए दीनी तालीम का नज़्म हो, जो ऐसे स्कूलों में तालीम पाते हैं, जहाँ दीनी तालीम नहीं है। दस बजे से ज़ुहर तक मुख़्तलिफ़ लोगों के लिए तालीम और अध्ययन का इन्तज़ाम रहे। एक दारुल मुतालआ हो, एक लाइब्रेरी हो, वहाँ अख़बारात आतं हों ताकि मौहल्ले वाले मौजूदा हालात से बा-ख़बर हो सकें। सहपहर में औरतों की तालीम व तर्बियत का इन्तज़ाम किया जा सकता है। अस्र के बाद स्कूलों और यूनिवर्सिटयों में तालीम हासिल करने वाले बच्चों को बुलाया जा सकता है। मग़रिब के बाद बड़े लोगों की तालीम का मर्कज़ हो सकता है। इशा के बाद सवालात और मशवरे और मौहल्ले को दरपेश मसाइल पर ग़ौर व फ़िक्र और विचार के लिए बैठक हो सकती है। मसाजिद में काउंसलिंग केन्द्र क़ायम किए जा सकते हैं। वहाँ डिस्पेंसरी खोली जा सकती है, जिससे मौहल्ले के मरीज़ मामूली ख़र्च पर फ़ायदा उठा सकते हैं। मुख़्तलिफ़ विषयों पर बहस (Debate) और मुज़ाकिरों का भी एहतमाम किया जा सकता है, ताकि मौहल्ले के लोग मौजूदा हालात से वाक़िफ़ भी हों और इन हालात में उनको कोई लाइहे अमल यानी रणनीति दिया जा सके।

शादी ब्याह के मौक़े पर हज़ारों और लाखों रुपये ख़र्च करके शादी हाल बुक किए जाते हैं। मस्जिद में अगर मेहमानों के बैठने का नज़्म कर दिया जाए तो यह रक़म बच सकती है। मस्जिद में निकाह

की मजलिस हो तो अल्लाह की मदद और फ़रिश्तों की हिमायत भी हासिल रहेगी। पति-पत्नी में भी इसके अच्छे प्रभाव होंगे, लेकिन नाम व नमूद, रिया और दिखावे के लिए शादी हाल को इज़्ज़त की निशानी समझा जाने लगा है। मस्जिद जो अल्लाह का घर है, ज़मीन में उससे इज़्ज़त और बरकत वाली जगह कौन सी हो सकती है?

फिर भी मस्जिद का तालीम व तर्बियत में बहुत अहम भूमिका हो सकता है और समाज में उसके ज़रिए एक बड़ी तबदीली लाई जा सकती है।

●●●

हमारे तालीमी संस्थान और देशवासी

देश की बड़ी संख्या बिरादराने वतन की है। ये हर जगह हमारे पड़ोसी हैं। हम हज़ार साल से ज़्यादा समय से उनके साथ रहते आए हैं। हमारे बीच इन्सानियत के मज़बूत रिश्ते क़ायम हैं। समानता और हमदर्दी का एक बाब है, जो देश का रौशन तरीन बाब है। इधर कुछ वर्षों से आज़ादी के बाद कुछ सियासी संगठनों की वोट बैंक पॉलिसी ने और कुछ साम्प्रदायिक लोगों की साज़िशों ने इन रिश्तों में दरारें पैदा करने का काम शुरू किया है। मौजूदा परस्थिति में भाईचारे का यह रिश्ता बेहद कमज़ोर नज़र आ रहा है।

मुसलमान ज़मीन पर अल्लाह का ख़लीफ़ा है। वह ख़ुदा के पैग़ाम का अमीन है। उसकी दीनी ज़िम्मेदारी है कि अपने पड़ोसी क़ौम को ख़ुदा के दीन से आगाह करें। यह काम मेहनत के बग़ैर नहीं होगा। मौहब्बत, ईसार, ख़ुलूस और ख़िदमत के बग़ैर न होगा। यह जज़्बा हमें अपने अंदर पैदा करना चाहिए। दूसरी बात यह है कि हमें अपने तालीमी संस्थान का तालीमी निज़ाम इस तरह बनाना चाहिए कि उसके दरवाज़े सबके लिए खुले हों। ग़ैर-मुस्लिम बच्चों के दाख़िले हमारे इदारों में होगें तो आपसी मौहब्बत पैदा होगी। ग़ैर-मुस्लिम त्योहारों पर स्कूल व कॉलेज में ईवेंट आयोजित होगी तो सद्भावना का माहौल पैदा होगा। आज देश की साम्प्रदायिक एकता ख़तरे में है। उसका सिर्फ़ एक इलाज यह है कि हम अपने देशवासियों से निकटता पैदा करें, उन के काम

आएं, उनकी ख़ुशी में शरीक हों। तालीमी इदारे यह काम बहुत अच्छे ढंग से कर सकते हैं।

ग़ैर-मुस्लिम बच्चों के दाख़िले से एक बड़ा फ़ायदा यह होगा कि हमारे बच्चों के अंदर कॉम्पिटीशन का जज़्बा पैदा होगा। इस वक़्त की परस्थिति यह है कि हम आपस में मुक़ाबला करते हैं। जब इक़बाल के साथ जगन्नाथ पढ़ेगा तो दोनों में आगे बढ़ने का जज़्बा पैदा होगा। क़ौम मैनस्ट्रीम में शामिल होगी, तब ही क़ौम तरक़्क़ी करेगी और क़ौम की तस्वीर बदलेगी।

●●●

सुबह व शाम की कलासेज़

ऐसे मौहल्ले, बस्तियाँ जहाँ मुसलमान फुलटाइम अपनी तालीम का नज़्म करने से बेबस हैं, वहाँ सुबह व शाम के कलासेज़ क़ायम किए जा सकते हैं। मौहल्ले या बस्ती के बच्चे अपनी मर्ज़ी और अपनी ज़रूरत के मुताबिक़ जहाँ चाहें पढ़ें, परन्तु उनके लिए नाज़रा क़ुरआन मजीद, ज़रूरी बुनियादी मसाइल की तालीम और उर्दू ज़ुबान की पढ़ाई के लिए सुबह में दो घण्टे या शाम में दो घण्टे की कलासेज़ मस्जिद या किसी मुनासिब जगह पर लगाई जा सकती हैं। छात्र से उसके लिए फ़ीस भी ली जा सकती है। ग़रीब छात्र की किफ़ालत ज़कात फ़ण्ड से भी की जा सकती है। इस तरह हमारे बच्चे और बच्चियाँ आधुनिक शिक्षा के साथ-साथ दीनी तालीम भी हासिल करेंगे। लेकिन यह तब ही मुमकिन है, जब सरपरस्तों को इसकी फ़िक्र हो। कुछ जगहों पर यह नज़्म क़ायम है, लेकिन क़ौम में तबदीली लाने के लिए ज़रूरी है कि हर मौहल्ले और बस्ती में इसका नज़्म किया जाए। यह काम मौहल्ले के ज़िम्मेदार लोगों का है कि वे इस तरफ़ तवज्जोह दें। हमारी दीनी जमआतों की भी ज़िम्मेदारी है कि वे इसका मन्सूबा और योजना बनाएँ। अगर हम ऐसा कर लें तो हमारे बच्चे पाकी, वुज़ू, ग़ुस्ल, नमाज़, रोज़ा जैसी इबादत के मसाइल भी सीख लेंगे। क़ुरआन मजीद भी पढ़ लेंगे और उर्दू ज़ुबान से भी परिचित हो जाएंगे।

●●●

फ़ासिलाती तालीम (दूरस्थ शिक्षा)

फ़ासिलाती तालीम का निज़ाम उन छात्र के लिए बनाया गया है, जो किसी न किसी वजह से हर दिन स्कूल, कॉलेजेज़ में जाकर पढ़ाई नहीं कर सकते। ऐसे छात्र प्राइवेट या फ़ासिलाती तालीम के ज़रिए अपनी तालीम जारी रख सकते हैं। जिसमें वे बहुत मामूली .ख़र्च में अपने घर से या जहाँ वो पढ़ाई लिखाई या किसी पेशे से जुड़े हों वहाँ रहकर उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

प्राइवेट तालीम और रोज़ाना बग़ैर नाग़ा तलीम के तरीक़े की ही तरह फ़ासिलाती तालीम के लिए आप न सिर्फ़ आर्टस या समाजी उलूम का विषय चुन सकते हैं, बल्कि साइन्सी उलूम व नफ़सियात भी सीख सकते हैं। देश के मुख्तलिफ़ जगहों पर इसके केन्द्र मौजूद हैं, जहाँ छात्र दाख़िला लेकर पाठ्य पुस्तकें हासिल कर सकते हैं और मुक़र्रर वक़्त पर परीक्षा में बैठ सकते हैं। इसके लिए NIOS से बारहवीं तक और (IGNOU) इन्दिरा गाँधी नेशनल ओपन युनिवर्सिटी (दिल्ली) और यू जी सी से मन्ज़ूर शुदा तालीमी संस्थान से BA, MA की डिग्री हासिल करके NET/SET परीक्षा की योग्यता हासिल की जा सकती है। NET/SET जैसे तदरीसी परीक्षा पास करके न सिर्फ़ आप M.Phil और Ph.D यानी रिसर्च के मैदान में जाकर तहक़ीक़ात कर सकते हैं बल्कि किसी युनिवर्सिटी या ऊँचे तालीम इदारे में मुख्तलिफ़ पद पर नियुक्त भी हो सकते हैं।

फ़ासिलाती तालीम के मैदान में मुस्लिम छात्र के लिए मौलाना अबुल कलाम आज़ाद युनिवर्सिटी भी अहम भूमिका अदा कर रही है। इस युनिवर्सिटी के ज़रिए आप उर्दू मेडियम में आर्टस और प्रोफ़ेशनल कोर्सेज़ की तालीम हासिल कर सकते हैं।

फ़ासिलाती तालीम अब कुछ बड़े दीनी इदारों में भी शुरू की गई है। हज़रत मौलाना मुहम्मद सालिम क़ासमी मरहूम (पूर्व सरपरस्त दारुल उलूम वक़्फ़ देवबन्द) के ज़रिए एक समय से दीनियात के नाम से फ़ासिलाती तालीम का कोर्स चलाया जा रहा है। जामिया इस्लामिया भोपाल हर साल हज़ारों छात्र को देश के मुख़्तलिफ़ हिस्सों में मराकिज़ बनाकर इस्लामियात के इम्तिहानात दिलाता है। इस तरह दीनी व दुनियावी उलूम में जो बाक़ायदा स्कूल और मदारिस में जाकर तालीम हासिल नहीं कर सकते, घर बैठे कम वक़्त और कम ख़र्च में न सिर्फ़ तालीम हासिल कर सकते हैं, बल्कि उस तालीम के ज़रिए सरकारी नौकरी भी हासिल कर सकते हैं।

●●●

ऑनलाइन एजुकेशन

टेक्नोलॉजी के इस तरक़्क़ी याफ़ता (प्रगतिशील) ज़माने में इल्म का शौक़ रखने वालों के लिए काफ़ी आसानियाँ पैदा कर दी हैं। नई टेक्नोलॉजी ने लोगों को ऑनलाइन एजुकेशन से परिचित कराया है। यह वास्तव में फ़ासिलाती तालीम ही की एक तरक़्क़ी याफ़ता शक्ल है, जिसके ज़रिए छात्र कहीं से भी तालीम हासिल कर सकते हैं। फ़ासिलाती तालीम की इस नई खोज ने देश के दूर दराज़ बंजर इलाक़ों में भी तालीम की नहरें निकाल दी हैं। इसका नतीजा यह है कि बहुत से लोग बड़े पैमाने पर इससे फ़ायदा उठाने लगे हैं। दिन प्रति दिन ऑनलाइन तालीम हासिल करने वाले छात्र की संख्या में इज़ाफ़ा हो रहा है। पिछले कुछ वर्षों में एम आई टी, हारवर्ड, स्टैनफोर्ड और प्रिंस्टन समेत बहुत सी दूसरी मशहूर युनिवर्सिटीज़ ने इन्टरनेट पर बहुत से फ्री कोर्सेज़ की पेशकश की है और पूरी दुनिया से दस लाख से ज़्यादा लोगों ने ऑन लाइन कोर्सेज़ के लिए अपना नाम दर्ज कराया है। बड़े पैमाने पर ऑन लाइन फ़ासिलाती तालीम के कोर्सेज़ ने लोगों में बेपनाह मक़बूलियत हासिल की है। और ऐसे बहुत से छात्र को मेयारी कॉलेज की तालीम फ़राहम की है, जो आम हालात में उस तक रसाई हासिल नहीं कर सकते थे। उनमें वे छात्र भी शामिल हैं, जो दूर दराज़ इलाक़ों में रहते हैं या अपने केरियर के बीच में हैं, कोरसेरा (Coursera) इसी तरह की मज़ीद एक जहत (प्रणाली) है। यह इन्टरनेट की लगभग मुफ़्त तालीमी कम्पनी है। यह अब तक शुमारियात से लेकर इमरानियात तक के लगभग 200 कोर्सेज़ ऑनलाइन मुहैया कर चुकी है। अब तक प्रिंस्टन युनिवर्सिटी, Penn युनिवर्सिटी, स्टैनफोर्ड युनिवर्सिटी और युनिवर्सिटी ऑफ़ मिशेगन जैसी अंतर्राष्ट्रीय मेयार की संगठन उससे जुड़

चुकी हैं। ऑनलाइन ऐजुकेशन की तरफ़ छात्र के बढ़ते रुझान की बुनियादी वजह यह है कि इसमें छात्र को काफ़ी सहूलियत फ़राहम होती है। युनिफॉर्म, वक़्त, जगह वग़ैरह की क़ैद नहीं होती। साथ ही रिवायती तालीम के मुक़ाबले उसमें ख़र्च भी कम होता है।

ऑनलाइन एजुकेशन के तरीक़े

बुनियादी तौर पर ऑनलाइन एजुकेशन में पढ़ाने के दो तरीक़े ज़्यादा मशहूर हैं :

1) Anychronous learning: इस पढ़ाने के तरीक़े में वक़्त की कोई क़ैद नहीं होती। छात्र को निसाब का तमाम तर मेटर ईमेल के ज़रिए हासिल हो जाता है, जिसे वे जब और जहाँ चाहें पढ़ सकते हैं। अगर कोई प्रोजेक्ट या असाइमेन्ट छात्र को दिया जाता है तो भी ईमेल के ज़रिए जमा कराया जाता है।

2) Synchronous learning: इसमें कलासेज़ अटेण्ड करने के लिए एक वक़्त मुक़र्रर किया जाता है, जिसमें शिक्षक और छात्र एक साथ ऑनलाइन प्लेटफार्म के ज़रिए आमने सामने होते हैं। इसमें छात्र शिक्षक से आमने सामने होते हैं और पूरी यक्सूई के साथ पाठ सुन सकते हैं। अगर कोई चीज़ समझ में न आए तो वह उसी वक़्त शिक्षक से पूछ सकते हैं।

यह लगभग रिवायती तदरीस ही की तरह है। इस तरह के कलासेज Web Conferencing या Video Chat के ज़रिए की जाती हैं। बहुत से कोर्सेज़ की सीडी/डी बी डी मिल सकती है।

●●●

तालीम और सोशल मीडिया

आज के दौर में सोशल मीडिया का इस्तेमाल बहुत बढ़ गया है। हम देखते हैं कि दुनिया के किसी हिस्से में कोई घटना घटी हो वो सोशल मीडिया के ज़रिए बहुत जल्दी वायरल हो जाती है। अपनी बात लोगों तक जल्दी पहुँचाने में सोशल मीडिया का अहम रोल है। इससे हटकर कि इसके नुक़सानात भी हैं, इसके फ़ायदे से इनकार मुमकिन नहीं है। सियासी लीडरान और सियासी पार्टियाँ भी अब इसका इस्तेमाल करती हैं। रहनुमा अपने बयानों, कमेन्टस और टिप्पणियाँ ट्यूटर और फ़ेसबुक और वाट्सअप पर डालकर फैला देते हैं।

मुसलमान एक समय तक जायज़ व नाजायज़ के मसले में उलझे रहते हैं। मेरा यह मतलब हरगिज़ नहीं कि एक मुसलमान को जायज़ और नाजायज़ नहीं देखना चाहिए। ज़रूर देखना चाहिए कि उसपर आख़िरत की ज़िन्दगी की कामयाबी व नाकामी का इन्हिसार है लेकिन इस सिलसिले में फ़तवा देने वालों को जल्द फ़ैसला लेना चाहिए ताकि इसका इस्तेमाल करके इन्सानियत को फ़ायदा पहुँचाया जा सके। देर से फ़ैसला और मुसलमानों की इन ईजादात से किनारा कशी कर लेने से एक बड़ा नुक़सान यह है कि दूसरे लोग इसका नकारात्मक इस्तेमाल करके दुनिया को हलाकत व तबाही की तरफ़ ले जाते हैं। अगर वक़्त रहते इस पर ग़ौर कर लें, फ़ैसले कर लें और इसका इस्तेमाल करने के क़ाबिल हो जाएं तो सकारात्मक रुख पर दुनिया को डाला जा सकता है।

तालीम के मैदान में भी इनका इस्तेमाल किया जाना चाहिए। फ़ेसबुक, ट्यूटर, वाट्सअप, इन्सटाग्राम और आई एम ओ मशहूर व मक़बूल साइट्स हैं। इनके ज़रिए तालीमी बेदारी मुहिम चलाई जा

सकती है, तालीमी रहनुमाई की जा सकती है, तालीमी मसाइल डिसकस किए जा सकते हैं, तालीमी ख़बरें लोगों तक पहुँचाई जा सकती हैं और सीधे तौर पर तालीम भी हासिल की जा सकती है। तालीम हासिल करने वालों का ग्रुप बना लिया जाए। एडमिन शिक्षक उसपर एक सबक़ लोड करे, छात्र उसको समझें, सवालात करें, समझा बूझा जाए और फिर शिक्षक अपने नम्बर पर परीक्षा के प्रश्नों के उत्तर हासिल करे, इस तरह घर बैठे-बैठे हम तालीम हासिल कर सकते हैं।

सोशल मीडिया का इस्तेमाल तो हम करते हैं लेकिन ज़्यादातर फ़ुज़ूल और बेकार की पोस्टें शेयर की जाती हैं। लोग अपनी सैल्फी लेकर ढेरों फोटो डालते रहते हैं। बग़ैर तहक़ीक के ख़बरें फैलाई जाती हैं, यहाँ तक कि इस्लाम के नाम से भी ऐसी बातें फैलाई जाती हैं, जिनकी कोई सुबूत नहीं मिलता। अगर हम थोड़ा संजीदा हो जाएँ और हमारे बीच कुछ ऐसे लोग खड़े हो जाएँ जो तालीमी रहनुमाई का फ़रीज़ा (कार्य) अंजाम दे सकें तो सोशल मीडिया के ज़रिए भी तालीमी काम किया जा सकता है और क़ौम की तस्वीर बदल सकती है।

●●●

तालीम और क़यादत (नेतृत्व)

कोई भी तहरीक (आन्दोलन) हो या संस्था जब तक उसके पास लागू करने वाली ताक़त न हो, वह एक महदूद दायरे में ही रह जाती है। अगर इसको लागू करने वाली ताक़त हासिल हो जाए और इक़्तिदार (सत्ता) में हिस्सेदारी और हिमायत मिल जाए तो इसके फैलने फूलने में देर नहीं लगती। यह मामला सब के साथ है, चाहे वह कोई तहरीक हो, किसी भी मक़सद के लिए हो, वह बेकार नज़रियात के साथ काम कर रही हो या हक़ के साथ, बहरहाल ताक़त और क़ुव्वत अगर मयस्सर है तो इस पैग़ाम को बहुत जल्द शौहरत मिलती है। इसलिए हम देखते हैं कि तहरीकें जब काम करती हैं तो अपने साथ एक सियासी तहरीक या तो ख़ुद क़ायम करती हैं या मौजूदा सियासी तहरीकों में से किसी एक तहरीक से सहयोग लेती हैं।

हम देखते हैं कि मुम्बई में जस्टिस बदरुद्दीन तैयब जी ने अन्जुमन इस्लाम क़ायम की तो ख़ुद वे सियासी तहरीक में शामिल हुए, काँग्रेस के अध्यक्ष भी रहे, अलीगढ़ तहरीक को भी उस वक़्त के हुक्मरानों की हिमायत हासिल रही, देवबन्द के उलमा की काँग्रेस में शिरकत ने देवबन्द तहरीक को ताक़त बख़्शी। अल-अमीन तहरीक को कर्नाटक के सियासी रहनुमाओं का सहयोग मिलता रहा, क्योंकि डॉ0 मुमताज़ अहमद ख़ाँ साहब की हिमायत उन्हें हासिल रही। केरला में मुस्लिम एजुकेशन सोसाइटी और मुस्लिम लीग में तालमेल रहा। हैदराबाद में दारुल इस्लाम ख़ुद MIM का क़ायम किया हुआ संस्था था। उसे MIM की सहायता और हिफ़ाज़त हासिल रही। नज़रियाती तहरीकों में मार्कसाइज्म ने इसलिए ताक़त पकड़ी कि मार्कसी हुकूमतें उन्हें फन्डिंग करती रहीं, BJP को RSS का और RSS को BJP का

सहयोग रहा। इन मसलों से यह मालूम होता है कि तालीमी तहरीक चलाने वालों को अपने राज्य के सियासी लोगों से तालमेल रखना चाहिए, बैठकर बात करनी चाहिए और आपसी सहयोग की राहें हमवार करनी चाहिए। हो सकता है वे लोग आज कमज़ोर हों, अपोज़ीशन में हों, लेकिन फिर भी एक ताक़त है और कल वे सत्ता और हुकूमत में आ जाएँ जब वे इक़तदार में आएंगें तो आपकी तहरीक को एक बड़ी ताक़त मिल जाएगी। इस तरह आप क़ौम व मिल्लत के बड़े काम कम वक़्त में बेहतर और अच्छे ढंग से कर जाएंगे। कुछ तहफ़्फ़ुज़ात हो सकते हैं इन तहफ़्फ़ुज़ात को सामने रखें लेकिन सियासी जमाअत के सपोर्ट के बग़ैर आप सिर्फ़ अपने पैग़ाम, इख़्लास, किरदार के बल पर कोई इन्क़लाब बरपा नहीं कर सकते।

ताज़ा मिसाल हमारे सामने तेलंगाना की है। तेलंगाना में हैदराबाद शामिल है और वहाँ मुसलमान हैं। पूरे तेलंगाना में 12% मुसलमान हैं। हैदराबाद के मुसलमान उवैसी साहब के भक्त हैं। तेलंगाना के मौजूदा मुख्यमंत्री श्री के चन्द्र शेखर राव साहब ने इस बात पर सोच विचार किया कि किस तरह मुसलमानों की हिमायत हासिल की जाए और किस तरह MIM के सहर (जादू) को तोड़ा जाए। उन्हें मशवरा मिला कि आप मुसलमानों की तालीम के लिए काम कीजिए, सरकार ने इस मशवरे के बाद एक मुस्लिम ब्यूरोक्रेट IPS अफ़सर जनाब ए0 के0 ख़ान साहब को मुकम्मल इख़्तियारात देकर एक कमेटी तेलंगाना माइनेट्रीज़ रेज़िडेन्शिल एजुकेशनल इंस्टीटयूशन्स सोसायटी (TMREIS) बनाई। इसके तहत उन्होंने तेलंगाना के 31 ज़िलों में 250 अल्पसंख्यक रिहाइशी स्कूलों के क़याम का मंसूबा बनाया गया। इसमें प्राइमरी से लेकर इण्टर कॉलेज तक हैं। दूसरा क़दम उन्होंने यह उठाया कि इस मंसूबे को वहाँ की मुस्लिम संगठनों के सहयोग से लाँच किया, इतने स्कूलों की इमारत बनाने में ही कई साल गुज़र जाते इस लिए मुस्लिम संगठनों के मशवरे पर सरकार ने उसी वक़्त किराए की इमारतों

में स्कूलों का आग़ाज़ कर दिया। मुस्लिम संगठनों ने किराए पर इमारतें फ़राहम करने में मदद की और सिर्फ़ छः महीने में ही 150 स्कूल काम करने लगे। अब तक 206 स्कूल बन चुके हैं, जिनमें 107 लड़कों के और 97 लड़कियों के हैं, दो कॉलेज हैं माक़ूल बजट दिया गया, निगरानी की गई, मुस्लिम संगठनों ने सरकार का और सरकार ने उनका साथ दिया और क़ौम के लिए सरकारी ख़र्च पर बहुत कम वक़्त में एक बड़ी तादाद में इदारे क़ायम हो गए। ज़ाहिर है किसी राज्य में 250 इंग्लिश मेडियम स्कूल, वह भी रेज़िडेन्शियल सिर्फ़ अल्पसंख्यकों के लिए हों तो वहाँ अल्पसंख्यकों में तालीमी इन्क़लाब आने से कौन रोक सकता है।

उत्तर प्रदेश में मुसलमान 20% है, बल्कि यूपी, बिहार, आसाम और पश्चिम बंगाल में मिलाकर पूरे हिन्दुस्तान के मुसलमानों का 50% इन चार राज्यों में आबाद है। अगर यहाँ के मुसलमान संगठित होकर बेहतर पॉलिसी बनाकर तालीमी मन्सूबे पर अमल करते हुए कोई रणनीति बनाएं तो यहाँ भी तेलंगाना के तजुर्बे को दोहराया जा सकता है।

जब तालीम वाले सियासी संगठन के साथ मिलकर काम करेंगे तो यक़ीनी तौर पर सियासी क़यादत भी डेवलप होगी और इस तरह मिल्लत में सियासी क़यादत का फ़ुक़दान दूर होगा। तालीमी तहरीक के पास बहुत बड़ी व्यक्तिगत ताक़त होती है, हर बच्चे के साथ कम से कम दो वोट होते हैं अगर आपसी तालमेल दुरुस्त हो और एक दूसरे के लाभ और फ़ायदे को सामने रखते हुए काम हो तो दोनों को लाभ और फ़ायदे होते हैं।

तालीम के ज़रिए ही समाजी क़यादत मिली है, जाहिल लोग समाज की न ख़िदमत कर सकते हैं न क़ियादत। सोशल एक्टिविज़्म भी तालीम के ज़रिए पैदा होता है। अब तो बहुत से कोर्सेज़ आ गए ख़ास तौर पर MSW का कोर्स तो समाजी कार्यकर्ताओं की तैयारी के लिए

है। सोशल लीडरशिप से क़ौम के बहुत से समाजी मसाइल हल होंगे, सड़क, अनाज, पानी, बिजली के बहुत से मसाइल हैं, जो समाज में पाए जाते हैं। बहुत सी सरकारी स्कीमें हैं, जो आती हैं चली जाती हैं हमें ख़बर भी नहीं होती। अगर हमारे बीच सोशल एक्टिविस्ट हो तो वह इस मैदान में काम करेंगे और ये एक्टिविस्ट बग़ैर तालीम के नहीं बन सकते। मालूम यह हुआ कि बग़ैर तालीम के सोशल लीडरशिप भी हासिल नहीं हो सकती।

हम व्यापार करते हैं, कोई फल बेच रहा है, कोई सब्ज़ी बेच रहा है, किसी ने परचून, कपड़े और जूते की दुकान कर रखी है। इस सतह तक कारोबार करने के लिए किसी हद तक अनपढ़ होने या सिर्फ़ दो चार दर्जे पढ़ लेने से काम चल जाएगा, मगर कम्पनी खोलने, माल का एक्सपोर्ट और इम्पोर्ट करने, या बड़े पैमाने पर काम करने, कोई कारख़ाना लगाने के लिए उच्च शिक्षा की ज़रूरत होगी। इसके लिए MBA, BBA वग़ैरह के कोर्स होते हैं, बाक़ायदा अब व्यापार के माहरीन पैदा होते हैं, उन्हें तिजारती क़यादत कहते हैं। यह क़यादत भी तालीम ही हासिल होती है। आज मुसलमानों के तिजारती उद्योग ठप हो गए। मुरादाबाद से पीतल का काम, मेरठ से क़ेंची का काम, अलीगढ़ से ताले का काम ग़ैरों के हाथों में इसलिए चला गया है कि हमने ख़ुद को अपडेट नहीं किया। हम ज़माने के साथ न चले। हम अपने पूर्वजों के तरीक़ों पर ही काम करते रहे। नए ज़माने की ईजादात से फ़ायदा न किया, इस मैदान में महारत हासिल न कर सके, अतः आज हम मज़दूर हैं और वे मालिक हैं। तिजारत के मैदान में भी हमें क़ायदाना रोल अदा करना चाहिए था और यह भी तालीम के ज़रिए ही मुमकिन है।

नबी अकरम[स0] ने मदीना पहुँचकर जो बड़े काम किए, उनमें एक काम 'मदीना मार्केट' का क़ियाम था, आपने उसके उसूल व नियम मुक़र्रर फ़रमाए। मार्केट का निगरां यानी इंसपेक्टर नियुक्त फ़रमाया, ख़ुद भी आप[स0] मार्केट जाते और नज़र रखते थे।

सियासी, समाजी और तिजारती क़यादत के साथ-साथ जो हमारी .ख़ालिस मज़हबी क़यादत है, मस्जिद का इमाम, मदरसे का मुदर्रिस वग़ैरह तालीम के बग़ैर मुमकिन नहीं है। क्या आप अपना इमाम किसी अपनढ़ को बनाते हैं, क्या आप मदरसे में किसी अनपढ़ से पढ़वा सकते हैं, ये मज़हबी क़यादत भी तालीम से ही पैदा होती है। ज़रूरत इस बात की है कि इस मज़हबी क़ियादत को मज़हबी तालीम के साथ आधुनिक शिक्षा भी इस हद तक हासिल करने चाहिए कि ज़माने की रफ़्तार को समझ सकें। दुश्मनों की साज़िशों को जान सकें, मौजूदा हालात में पेश आने वाले मसाइल में सही रहनुमाई कर सकें और क़ौम को तरक़्क़ी के रास्ते पर ले जा सकें।

इससे मालूम हुआ कि क़यादत का मन्सब (पद) बग़ैर तालीम के हासिल नहीं हो सकता। क़यादत चाहें किसी भी मैदान में हो और यह तालीम सिर्फ़ रस्मी तालीम न हो, बल्कि जो क़ौम मुक़ाबले में है और जिस क़ौम पर आपको ग़ालिब आना है। आपका इल्म उससे .ज्यादा, आपका अख़्लाक़ व किरदार उससे मज़बूत होना चाहिए। अगर आप इससे पीछे रह गए तो मुक़तदी ही रहेंगे, इमाम नहीं बन सकते :

हुसूले इल्म से ही क़ौम की तक़दीर बदलेगी
यही सच है फ़क़्त तालीम से तस्वीर बदलेगी

(डॉ0 तारिक़ क़मर)

●●●